1055CH15

15 महावीरप्रसाद द्विवेदी

महावीरप्रसाद **द्विवेदी** का जन्म सन् 1864 में ग्राम दौलतपुर, ज़िला रायबरेली (उ.प्र.) में हुआ। परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण स्कूली शिक्षा पूरी कर उन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। बाद में उस नौकरी से इस्तीफ़ा देकर सन् 1903 में प्रसिद्ध हिंदी मासिक पत्रिका **सरस्वती** का संपादन शुरू किया और सन् 1920 तक उसके संपादन से जुड़े रहे। सन् 1938 में उनका देहांत हो गया।

महावीरप्रसाद द्विवेदी केवल एक व्यक्ति नहीं थे वे एक संस्था थे जिससे परिचित होना हिंदी साहित्य के गौरवशाली अध्याय से परिचित होना है। वे हिंदी के पहले व्यवस्थित संपादक, भाषावैज्ञानिक, इतिहासकार, पुरातत्ववेत्ता, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, वैज्ञानिक चिंतन एवं लेखन के स्थापक, समालोचक और अनुवादक थे। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं–**रसज्ञ रंजन**, **साहित्य-सीकर**, **साहित्य-संदर्भ**, **अद्‌भुत आलाप** (निबंध संग्रह)। **संपत्तिशास्त्र** उनकी अर्थशास्त्र से संबंधित पुस्तक है। **महिला मोद** महिला उपयोगी पुस्तक है तो **आध्यात्मिकी** दर्शन की। **द्विवेदी काव्य माला** में उनकी कविताएँ हैं। उनका संपूर्ण साहित्य **महावीरप्रसाद द्विवेदी रचनावली** के पंद्रह खंडों में प्रकाशित है।

महावीरप्रसाद द्विवेदी के बारे में समझा जाता रहा है कि उन्होंने हिंदी गद्य की भाषा का परिष्कार किया और लेखकों की सुविधा के लिए व्याकरण और वर्तनी के नियम स्थिर किए। कविता की भाषा के रूप में भी ब्रज भाषा के बदले खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया। युग निर्माता महावीरप्रसाद द्विवेदी ने स्वाधीनता की चेतना विकसित करने के लिए स्वदेशी चिंतन को व्यापक बनाया। उन्होंने **सरस्वती** के

© NCERT not to be republished

माध्यम से पत्रकारिता का श्रेष्ठ स्वरूप सामने रखा। हिंदी में पहली बार समालोचना को स्थापित करने का श्रेय भी उनको जाता है। उन्होंने भारतीय पुरातत्व एवं इतिहास पर खोजपरक कार्य किए। कुल मिलाकर उनके कार्यों का मूल्यांकन व्यापक हिंदी नवजागरण के संदर्भ में ही संभव है।

विद्वता एवं बहुज्ञता के साथ सरसता उनके लेखन की प्रमुख विशेषता है। उनके लेखन में व्यंग्य की छटा देखते ही बनती है।

आज हमारे समाज में लड़कियाँ शिक्षा पाने एवं कार्यक्षेत्र में क्षमता दर्शाने में लड़कों से बिलकुल भी पीछे नहीं हैं किंतु यहाँ तक पहुँचने के लिए अनेक स्त्री-पुरुषों ने लंबा संघर्ष किया। नवजागरण काल के चिंतकों ने मात्र स्त्री-शिक्षा ही नहीं बल्कि समाज में जनतांत्रिक एवं वैज्ञानिक चेतना के संपूर्ण विकास के लिए अलख जगाया। द्विवेदी जी का यह लेख उन सभी पुरातनपंथी विचारों से लोहा लेता है जो स्त्री-शिक्षा को व्यर्थ अथवा समाज के विघटन का कारण मानते थे। इस लेख की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें परंपरा को ज्यों का त्यों नहीं स्वीकारा गया है, बल्कि विवेक से फैसला लेकर ग्रहण करने योग्य को लेने की बात की गई है और परंपरा का जो हिस्सा सड़-गल चुका है, उसे रूढ़ि मानकर छोड़ देने की। यह विवेकपूर्ण दृष्टि संपूर्ण नवजागरण काल की विशेषता है। आज इस निबंध का अनेक दृष्टियों से ऐतिहासिक महत्त्व है।

*यह लेख पहली बार सितंबर 1914 की **सरस्वती** में **पढ़े लिखों का पांडित्य** शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। बाद में द्विवेदी जी ने इसे **महिला मोद** पुस्तक में शामिल करते समय इसका शीर्षक **स्त्री-शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खंडन** रख दिया था। इस निबंध की भाषा और वर्तनी को हमने संशोधित करने का प्रयास नहीं किया है।*

© NCERT not to be republished

स्त्री-शिक्षा के विरोधी कुतर्कों का खंडन

बड़े शोक की बात है, आजकल भी ऐसे लोग विद्यमान हैं जो स्त्रियों को पढ़ाना उनके और गृह-सुख के नाश का कारण समझते हैं। और, लोग भी ऐसे-वैसे नहीं, सुशिक्षित लोग-ऐसे लोग जिन्होंने बड़े-बड़े स्कूलों और शायद कॉलिजों में भी शिक्षा पाई है, जो धर्म-शास्त्र और संस्कृत के ग्रंथ साहित्य से परिचय रखते हैं, और जिनका पेशा कुशिक्षितों को सुशिक्षित करना, कुमार्गगामियों को सुमार्गगामी बनाना और अधार्मिकों को धर्मतत्त्व समझाना है। उनकी दलीलें सुन लीजिए-

1. पुराने संस्कृत-कवियों के नाटकों में कुलीन स्त्रियों से अपढ़ों की भाषा में बातें कराई गई हैं। इससे प्रमाणित है कि इस देश में स्त्रियों को पढ़ाने की चाल न थी। होती तो इतिहास-पुराणादि में उनको पढ़ाने की नियमबद्ध प्रणाली ज़रूर लिखी मिलती।

2. स्त्रियों को पढ़ाने से अनर्थ होते हैं। शकुंतला इतना कम पढ़ी थी कि गँवारों की भाषा में मुश्किल से एक छोटा-सा श्लोक वह लिख सकी थी। तिस पर भी उसकी इस इतनी कम शिक्षा ने भी अनर्थ कर डाला। शकुंतला ने जो कटु वाक्य दुष्यंत को कहे, वह इस पढ़ाई का ही दुष्परिणाम था।
3. जिस भाषा में शकुंतला ने श्लोक रचा था वह अपढ़ों की भाषा थी। अतएव नागरिकों की भाषा की बात तो दूर रही, अपढ़ गँवारों की भी भाषा पढ़ाना स्त्रियों को बरबाद करना है।

© NCERT not to be republished

इस तरह की दलीलों का सबसे अधिक प्रभावशाली उत्तर उपेक्षा ही है। तथापि हम दो–चार बातें लिखे देते हैं।

नाटकों में स्त्रियों का प्राकृत बोलना उनके अपढ़ होने का प्रमाण नहीं। अधिक से अधिक इतना ही कहा जा सकता है कि वे संस्कृत न बोल सकती थीं। संस्कृत न बोल सकना न अपढ़ होने का सबूत है और न गँवार होने का। अच्छा तो उत्तररामचरित में ऋषियों की वेदांतवादिनी पत्नियाँ कौन–सी भाषा बोलती थीं? उनकी संस्कृत क्या कोई गँवारी संस्कृत थी? भवभूति और कालिदास आदि के नाटक जिस ज़माने के हैं उस ज़माने में शिक्षितों का समस्त समुदाय संस्कृत ही बोलता था, इसका प्रमाण पहले कोई दे ले तब प्राकृत बोलने वाली स्त्रियों को अपढ़ बताने का साहस करे। इसका क्या सबूत कि उस ज़माने में बोलचाल की भाषा प्राकृत न थी? सबूत तो प्राकृत के चलन के ही मिलते हैं। प्राकृत यदि उस समय की प्रचलित भाषा न होती तो बौद्धों तथा जैनों के हज़ारों ग्रंथ उसमें क्यों लिखे जाते, और भगवान शाक्य मुनि तथा उनके चेले प्राकृत ही में क्यों धर्मोपदेश देते? बौद्धों के त्रिपिटक ग्रंथ की रचना प्राकृत में किए जाने का एकमात्र कारण यही है कि उस ज़माने में प्राकृत ही सर्वसाधारण की भाषा थी। अतएव प्राकृत बोलना और लिखना अपढ़ और अशिक्षित होने का चिह्न नहीं। जिन पंडितों ने गाथा–सप्तशती, सेतुबंध–महाकाव्य और कुमारपालचरित आदि ग्रंथ प्राकृत में बनाए हैं, वे यदि अपढ़ और गँवार थे तो हिंदी के प्रसिद्ध से भी प्रसिद्ध अखबार का संपादक इस ज़माने में अपढ़ और गँवार कहा जा सकता है; क्योंकि वह अपने ज़माने की प्रचलित भाषा में अखबार लिखता है। हिंदी, बाँग्ला आदि भाषाएँ आजकल की प्राकृत हैं, शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री और पाली आदि भाषाएँ उस ज़माने की थीं। प्राकृत पढ़कर भी उस ज़माने में लोग उसी तरह सभ्य, शिक्षित और पंडित हो सकते थे जिस तरह कि हिंदी, बाँग्ला, मराठी आदि भाषाएँ पढ़कर इस ज़माने में हम हो सकते हैं। फिर प्राकृत बोलना अपढ़ होने का सबूत है, यह बात कैसे मानी जा सकती है?

जिस समय आचार्यों ने नाट्यशास्त्र–संबंधी नियम बनाए थे उस समय सर्वसाधारण की भाषा संस्कृत न थी। चुने हुए लोग ही संस्कृत बोलते या बोल सकते थे। इसी से उन्होंने उनकी भाषा संस्कृत और दूसरे लोगों तथा स्त्रियों की भाषा प्राकृत रखने का नियम कर दिया।

पुराने ज़माने में स्त्रियों के लिए कोई विश्वविद्यालय न था। फिर नियमबद्ध प्रणाली का उल्लेख आदि पुराणों में न मिले तो क्या आश्चर्य। और, उल्लेख उसका कहीं रहा हो, पर नष्ट हो गया हो तो? पुराने ज़माने में विमान उड़ते थे। बताइए उनके बनाने की विद्या सिखाने वाला कोई शास्त्र! बड़े–बड़े जहाज़ों पर सवार होकर लोग द्वीपांतरों को जाते थे। दिखाइए, जहाज़ बनाने की नियमबद्ध प्रणाली के दर्शक ग्रंथ! पुराणादि में विमानों और जहाज़ों द्वारा की गई यात्राओं के हवाले देखकर उनका अस्तित्व तो हम बड़े गर्व से

स्वीकार करते हैं, परंतु पुराने ग्रंथों में अनेक प्रगल्भ पंडिताओं के नामोल्लेख देखकर भी कुछ लोग भारत की तत्कालीन स्त्रियों को मूर्ख, अपढ़ और गँवार बताते हैं! इस तर्कशास्त्रज्ञता और इस न्यायशीलता की बलिहारी! वेदों को प्राय: सभी हिंदू ईश्वर-कृत मानते हैं। सो ईश्वर तो वेद-मंत्रों की रचना अथवा उनका दर्शन विश्ववरा आदि स्त्रियों से करावे और हम उन्हें ककहरा पढ़ाना भी पाप समझें। शीला और विज्जा आदि कौन थीं? वे स्त्री थीं या नहीं? बड़े-बड़े पुरुष-कवियों से आदृत हुई हैं या नहीं? शार्ङ्गधर-पद्धति में उनकी कविता के नमूने हैं या नहीं? बौद्ध-ग्रंथ त्रिपिटक के अंतर्गत थेरीगाथा में जिन सैकड़ों स्त्रियों की पद्य-रचना उद्धृत है वे क्या अपढ़ थीं? जिस भारत में कुमारिकाओं को चित्र बनाने, नाचने, गाने, बजाने, फूल चुनने, हार गूँथने, पैर मलने तक की कला सीखने की आज्ञा थी उनको लिखने-पढ़ने की आज्ञा न थी। कौन विज्ञ ऐसी बात मुख से निकालेगा? और, कोई निकाले भी तो मानेगा कौन?

अत्रि की पत्नी पत्नी-धर्म पर व्याख्यान देते समय घंटों पांडित्य प्रकट करे, गार्गी बड़े-बड़े ब्रह्मवादियों को हरा दे, मंडन मिश्र की सहधर्मचारिणी शंकराचार्य के छक्के छुड़ा दे! गज़ब! इससे अधिक भयंकर बात और क्या हो सकेगी! यह सब पापी पढ़ने का अपराध है। न वे पढ़तीं, न वे पूजनीय पुरुषों का मुकाबला करतीं। यह सारा दुराचार स्त्रियों को पढ़ाने ही का कुफल है। समझे। स्त्रियों के लिए पढ़ना कालकूट और पुरुषों के लिए पीयूष का घूँट! ऐसी ही दलीलों और दृष्टांतों के आधार पर कुछ लोग स्त्रियों को अपढ़ रखकर भारतवर्ष का गौरव बढ़ाना चाहते हैं।

मान लीजिए कि पुराने ज़माने में भारत की एक भी स्त्री पढ़ी-लिखी न थी। न सही। उस समय स्त्रियों को पढ़ाने की ज़रूरत न समझी गई होगी। पर अब तो है। अतएव पढ़ाना चाहिए। हमने सैकड़ों पुराने नियमों, आदेशों और प्रणालियों को तोड़ दिया है या नहीं? तो, चलिए, स्त्रियों को अपढ़ रखने की इस पुरानी चाल को भी तोड़ दें। हमारी प्रार्थना तो यह है कि स्त्री-शिक्षा के विपक्षियों को क्षणभर के लिए भी इस कल्पना को अपने मन में स्थान न देना चाहिए कि पुराने ज़माने में यहाँ की सारी स्त्रियाँ अपढ़ थीं अथवा उन्हें पढ़ने की आज्ञा न थी। जो लोग पुराणों में पढ़ी-लिखी स्त्रियों के हवाले माँगते हैं उन्हें श्रीमद्भागवत, दशमस्कंध, के उत्तरार्द्ध का त्रेपनवाँ अध्याय पढ़ना चाहिए। उसमें रुक्मिणी-हरण की कथा है। रुक्मिणी ने जो एक लंबा-चौड़ा पत्र एकांत में लिखकर, एक ब्राह्मण के हाथ, श्रीकृष्ण को भेजा था वह तो प्राकृत में न था। उसके प्राकृत में होने का उल्लेख भागवत में तो नहीं। उसमें रुक्मिणी ने जो पांडित्य दिखाया है वह उसके अपढ़ और अल्पज्ञ होने अथवा गँवारपन का सूचक नहीं। पुराने ढंग के पक्के सनातन-धर्मावलंबियों की दृष्टि में तो नाटकों की अपेक्षा भागवत का महत्त्व बहुत ही अधिक होना चाहिए। इस दशा में यदि उनमें से कोई यह कहे कि सभी

प्राक्कालीन स्त्रियाँ अपढ़ होती थीं तो उसकी बात पर विश्वास करने की ज़रूरत नहीं। भागवत की बात यदि पुराणकार या कवि की कल्पना मानी जाए तो नाटकों की बात उससे भी गई-बीती समझी जानी चाहिए।

स्त्रियों का किया हुआ अनर्थ यदि पढ़ाने ही का परिणाम है तो पुरुषों का किया हुआ अनर्थ भी उनकी विद्या और शिक्षा ही का परिणाम समझना चाहिए। बम के गोले फेंकना, नरहत्या करना, डाके डालना, चोरियाँ करना, घूस लेना–ये सब यदि पढ़ने-लिखने ही का परिणाम हो तो सारे कॉलिज, स्कूल और पाठशालाएँ बंद हो जानी चाहिए। परंतु विक्षिप्तों, बातव्यथितों और ग्रहग्रस्तों के सिवा ऐसी दलीलें पेश करने वाले बहुत ही कम मिलेंगे। शकुंतला ने दुष्यंत को कटु वाक्य कहकर कौन-सी अस्वाभाविकता दिखाई? क्या वह यह कहती कि–"आर्य पुत्र, शाबाश! बड़ा अच्छा काम किया जो मेरे साथ गांधर्व-विवाह करके मुकर गए। नीति, न्याय, सदाचार और धर्म की आप प्रत्यक्ष मूर्ति हैं!" पत्नी पर घोर से घोर अत्याचार करके जो उससे ऐसी आशा रखते हैं वे मनुष्य-स्वभाव का किंचित् भी ज्ञान नहीं रखते। सीता से अधिक साध्वी स्त्री नहीं सुनी गई। जिस कवि ने, शकुंतला नाटक में, अपमानित हुई शकुंतला से दुष्यंत के विषय में दुर्वाक्य कहाया है उसी ने परित्यक्त होने पर सीता से रामचंद्र के विषय में क्या कहाया है, सुनिए–

वाच्यस्त्वया मद्वचनात् स राजा–
वह्नौ विशुद्धामपि यत्समक्षम्।
मां लोकवाद श्रवणादहासीः
श्रुतस्य तत्किं सदृशं कुलस्य?

लक्ष्मण! ज़रा उस राजा से कह देना कि मैंने तो तुम्हारी आँख के सामने ही आग में कूदकर अपनी विशुद्धता साबित कर दी थी। तिस पर भी, लोगों के मुख से निकला मिथ्यावाद सुनकर ही तुमने मुझे छोड़ दिया। क्या यह बात तुम्हारे कुल के अनुरूप है? अथवा क्या यह तुम्हारी विद्वता या महत्ता को शोभा देनेवाली है?

सीता का यह संदेश कटु नहीं तो क्या मीठा है? 'राजा' मात्र कहकर उनके पास अपना संदेसा भेजा। यह उक्ति न किसी गँवार स्त्री की; किंतु महाब्रह्मज्ञानी राजा जनक की लड़की और मन्वादि महर्षियों के धर्मशास्त्रों का ज्ञान रखने वाली रानी की–

नृपस्य वर्णाश्रमपालनं यत्
स एव धर्मो मनुना प्रणीतः

सीता की धर्मशास्त्रज्ञता का यह प्रमाण, वहीं, आगे चलकर, कुछ ही दूर पर, कवि ने दिया है। सीता-परित्याग के कारण वाल्मीकि के समान शांत, नीतिज्ञ और क्षमाशील तपस्वी तक ने–"अस्त्येव मन्युर्भरताग्रजे मे"–कहकर रामचंद्र पर क्रोध प्रकट किया है। अतएव,

शकुंतला की तरह, अपने परित्याग को अन्याय समझने वाली सीता का रामचंद्र के विषय में, कटुवाक्य कहना सर्वथा स्वाभाविक है। न यह पढ़ने-लिखने का परिणाम है न गँवारपन का, न अकुलीनता का।

पढ़ने-लिखने में स्वयं कोई बात ऐसी नहीं जिससे अनर्थ हो सके। अनर्थ का बीज उसमें हरगिज़ नहीं। अनर्थ पुरुषों से भी होते हैं। अपढ़ों और पढ़े-लिखों, दोनों से। अनर्थ, दुराचार और पापाचार के कारण और ही होते हैं और वे व्यक्ति-विशेष का चाल-चलन देखकर जाने भी जा सकते हैं। अतएव स्त्रियों को अवश्य पढ़ाना चाहिए।

जो लोग यह कहते हैं कि पुराने ज़माने में यहाँ स्त्रियाँ न पढ़ती थीं अथवा उन्हें पढ़ने की मुमानियत थी वे या तो इतिहास से अभिज्ञता नहीं रखते या जान-बूझकर लोगों को धोखा देते हैं। समाज की दृष्टि में ऐसे लोग दंडनीय हैं। क्योंकि स्त्रियों को निरक्षर रखने का उपदेश देना समाज का अपकार और अपराध करना है—समाज की उन्नति में बाधा डालना है।

'शिक्षा' बहुत व्यापक शब्द है। उसमें सीखने योग्य अनेक विषयों का समावेश हो सकता है। पढ़ना-लिखना भी उसी के अंतर्गत है। इस देश की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली अच्छी नहीं। इस कारण यदि कोई स्त्रियों को पढ़ाना अनर्थकारी समझे तो उसे उस प्रणाली का संशोधन करना या कराना चाहिए, खुद पढ़ने-लिखने को दोष न देना चाहिए। लड़कों ही की शिक्षा-प्रणाली कौन-सी बड़ी अच्छी है। प्रणाली बुरी होने के कारण क्या किसी ने यह राय दी है कि सारे स्कूल और कॉलिज बंद कर दिए जाएँ? आप खुशी से लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा की प्रणाली का संशोधन कीजिए। उन्हें क्या पढ़ाना चाहिए, कितना पढ़ाना चाहिए, किस तरह की शिक्षा देना चाहिए और कहाँ पर देना चाहिए—घर में या स्कूल में—इन सब बातों पर बहस कीजिए, विचार कीजिए, जी में आवे सो कीजिए; पर परमेश्वर के लिए यह न कहिए कि स्वयं पढ़ने-लिखने में कोई दोष है—वह अनर्थकर है, वह अभिमान का उत्पादक है, वह गृह-सुख का नाश करने वाला है। ऐसा कहना सोलहों आने मिथ्या है।

प्रश्न-अभ्यास

1. कुछ पुरातन पंथी लोग स्त्रियों की शिक्षा के विरोधी थे। द्विवेदी जी ने क्या-क्या तर्क देकर स्त्री-शिक्षा का समर्थन किया?
2. 'स्त्रियों को पढ़ाने से अनर्थ होते हैं'—कुतर्कवादियों की इस दलील का खंडन द्विवेदी जी ने कैसे किया है, अपने शब्दों में लिखिए।

© NCERT not to be republished

3. द्विवेदी जी ने स्त्री-शिक्षा विरोधी कुतर्कों का खंडन करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया है-जैसे 'यह सब पापी पढ़ने का अपराध है। न वे पढ़तीं, न वे पूजनीय पुरुषों का मुकाबला करतीं।' आप ऐसे अन्य अंशों को निबंध में से छाँटकर समझिए और लिखिए।
4. पुराने समय में स्त्रियों द्वारा प्राकृत भाषा में बोलना क्या उनके अपढ़ होने का सबूत है—पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
5. परंपरा के उन्हीं पक्षों को स्वीकार किया जाना चाहिए जो स्त्री-पुरुष समानता को बढ़ाते हों-तर्क सहित उत्तर दीजिए।
6. तब की शिक्षा प्रणाली और अब की शिक्षा प्रणाली में क्या अंतर है? स्पष्ट करें।

रचना और अभिव्यक्ति

7. महावीरप्रसाद द्विवेदी का निबंध उनकी दूरगामी और खुली सोच का परिचायक है, कैसे?
8. द्विवेदी जी की भाषा-शैली पर एक अनुच्छेद लिखिए।

भाषा-अध्ययन

9. निम्नलिखित अनेकार्थी शब्दों को ऐसे वाक्यों में प्रयुक्त कीजिए जिनमें उनके एकाधिक अर्थ स्पष्ट हों—
   चाल, दल, पत्र, हरा, पर, फल, कुल

पाठेतर सक्रियता

- अपनी दादी, नानी और माँ से बातचीत कीजिए और (स्त्री-शिक्षा संबंधी) उस समय की स्थितियों का पता लगाइए और अपनी स्थितियों से तुलना करते हुए निबंध लिखिए। चाहें तो उसके साथ तसवीरें भी चिपकाइए।
- लड़कियों की शिक्षा के प्रति परिवार और समाज में जागरूकता आए—इसके लिए आप क्या-क्या करेंगे?
- स्त्री-शिक्षा पर एक पोस्टर तैयार कीजिए।
- स्त्री-शिक्षा पर एक नुक्कड़ नाटक तैयार कर उसे प्रस्तुत कीजिए।

शब्द-संपदा

विद्यमान	-	उपस्थित
कुमार्गगामी	-	बुरी राह पर चलने वाले
सुमार्गगामी	-	अच्छी राह पर चलने वाले
अधार्मिक	-	धर्म से संबंध न रखने वाला
धर्मतत्त्व	-	धर्म का सार

© NCERT not to be republished

दलीलें	–	तर्क
अनर्थ	–	बुरा, अर्थहीन
अपढ़ों	–	अनपढ़ों
उपेक्षा	–	ध्यान न देना
प्राकृत	–	एक प्राचीन भाषा
वेदांतवादिनी	–	वेदांत दर्शन पर बोलने वाली
दर्शक ग्रंथ	–	जानकारी देने वाली या दिखाने वाली पुस्तकें
तत्कालीन	–	उस समय का
तर्कशास्त्रज्ञता	–	तर्कशास्त्र को जानना
न्यायशीलता	–	न्याय के अनुसार आचरण करना
कुतर्क	–	अनुचित तर्क
खंडन	–	दूसरे के मत का युक्तिपूर्वक निराकरण
प्रगल्भ	–	प्रतिभावान
नामोल्लेख	–	नाम का उल्लेख करना
आदृत	–	आदर या सम्मान पाया, सम्मानित
विज्ञ	–	समझदार, विद्वान
ब्रह्मवादी	–	वेद पढ़ने-पढ़ाने वाला
दुराचार	–	निंदनीय आचरण
सहधर्मचारिणी	–	पत्नी
कालकूट	–	ज़हर
पीयूष	–	अमृत
दृष्टांत	–	उदाहरण, मिसाल
अल्पज्ञ	–	थोड़ा जानने वाला
प्राक्कालीन	–	पुरानी
व्यभिचार	–	पाप
विक्षिप्त	–	पागल
बात व्यथित	–	बातों से दुखी होने वाले
ग्रह ग्रस्त	–	पाप ग्रह से प्रभावित
किंचित्	–	थोड़ा
दुर्वाक्य	–	निंदा करने वाला वाक्य या बात
परित्यक्त	–	पूरे तौर पर छोड़ा हुआ
मिथ्यावाद	–	झूठी बात
कलंकारोपण	–	दोष मढ़ना, दोषी ठहराना

© NCERT not to be republished

निर्भर्त्सना	–	तिरस्कार, निंदा
नीतिज्ञ	–	नीति जानने वाला
हरगिज़	–	किसी हालत में
मुमानियत	–	रोक, मनाही
अभिज्ञता	–	जानकारी, ज्ञान
अपकार	–	अहित

यह भी जानें

भवभूति – संस्कृत के प्रधान नाटककार हैं। इनके तीन प्रसिद्ध ग्रंथ वीररचित, उत्तररामचरित और मालतीमाधव हैं। भवभूति करुणरस के प्रमुख लेखक थे।

विश्ववरा – अत्रिगोत्र की स्त्री। ये ऋग्वेद के पाँचवें मंडल 28वें सूक्त की एक में से छठी ऋक् की ऋषि थीं।

शीला – कौरिडन्य मुनि की पत्नी का नाम।

थेरीगाथा – बौद्ध भिक्षुणियों की पद्य रचना इसमें संकलित है।

अनुसूया – अत्रि मुनि की पत्नी और दक्ष प्रजापति की कन्या।

गार्गी – वैदिक समय की एक पंडिता ऋषिपुत्री। इनके पिता का नाम गर्ग मुनि था। मिथिला के जनकराज की सभा में इन्होंने पंडितों के सामने याज्ञवल्क्य के साथ वेदांत शास्त्र विषय पर शास्त्रार्थ किया था।

गाथा सप्तशती – प्राकृत भाषा का ग्रंथ जिसे हाल द्वारा रचित माना जाता है।

कुमारपाल चरित्र – एक ऐतिहासिक ग्रंथ है जिसे 12वीं शताब्दी के अंत में अज्ञातनामा कवि ने अनहल के राजा कुमारपाल के लिए लिखा था। इसमें ब्रह्मा से लेकर राजा कुमारपाल तक बौद्ध राजाओं की वंशावली का वर्णन है।

त्रिपिटक ग्रंथ – गौतम बुद्ध ने भिक्षु-भिक्षुणियों को अपने सारे उपदेश मौखिक दिए थे। उन उपदेशों को उनके शिष्यों ने कंठस्थ कर लिया था और बाद में उन्हें त्रिपिटक के रूप में लेखबद्ध किया गया। वे तीन त्रिपिटक हैं–सुत या सूत्र पिटक, विनय पिटक और अभिधर्म पिटक।

शाक्य मुनि – शक्यवंशीय होने के कारण गौतम बुद्ध को शाक्य मुनि भी कहा जाता है।

नाट्यशास्त्र – भरतमुनि रचित काव्यशास्त्र संबंधी संस्कृत के इस ग्रंथ में मुख्यत: रूपक (नाटक) का शास्त्रीय विवेचन किया गया है। इसकी रचना 300 ईसा पूर्व मानी जाती है।

कालिदास – संस्कृत के महान कवियों में कालिदास की गणना की जाती है। उन्होंने **कुमारसंभव**, **रघुवंश** (महाकाव्य), **ऋतु संहार**, **मेघदूत** (खंडकाव्य), **विक्रमोर्वशीय**, **मालविकाग्निमित्र** और **अभिज्ञान शाकुंतलम्** (नाटक) की रचना की।

© NCERT not to be republished

आजादी के आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़ी पंडिता रमाबाई ने स्त्रियों की शिक्षा एवं उनके शोषण के विरुद्ध जो आवाज़ उठाई उसकी एक झलक यहाँ प्रस्तुत है। आप ऐसे अन्य लोगों के योगदान के बारे में पढ़िए और मित्रों से चर्चा कीजिए–

पंडिता रमाबाई

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का पाँचवाँ अधिवेशन 1889 में मुंबई में आयोजित हुआ था। खचाखच भरे हॉल में देश भर के नेता एकत्र हुए थे।

एक सुंदर युवती अधिवेशन को संबोधित करने के लिए उठी। उसकी आँखों में तेज और उसके कांतिमय चेहरे पर प्रतिभा झलक रही थी। इससे पहले कांग्रेस अधिवेशनों में ऐसा दृश्य देखने में नहीं आया था। हॉल में लाउडस्पीकर न थे। पीछे बैठे हुए लोग उस युवती की आवाज़ नहीं सुन पा रहे थे। वे आगे की ओर बढ़ने लगे। यह देखकर युवती ने कहा, "भाइयो, मुझे क्षमा कीजिए। मेरी आवाज़ आप तक नहीं पहुँच पा रही है। लेकिन इस पर मुझे आश्चर्य नहीं है। क्या आपने शताब्दियों तक कभी किसी महिला की आवाज़ सुनने की कोशिश की? क्या आपने उसे इतनी शक्ति प्रदान की कि वह अपनी आवाज़ को आप तक पहुँचने योग्य बना सके?"

प्रतिनिधियों के पास इन प्रश्नों के उत्तर न थे।

इस साहसी युवती को अभी और बहुत कुछ कहना था। उसका नाम पंडिता रमाबाई था। उस दिन तक स्त्रियों ने कांग्रेस के अधिवेशनों में शायद ही कभी भाग लिया हो। पंडिता रमाबाई के प्रयास से 1889 के उस अधिवेशन में 9 महिला प्रतिनिधि सम्मिलित हुई थीं।

वे एक मूक प्रतिनिधि नहीं बन सकती थीं। विधवाओं को सिर मुँडवाए जाने की प्रथा के विरोध में रखे गए प्रस्ताव पर उन्होंने एक ज़ोरदार भाषण दिया। "आप पुरुष लोग ब्रिटिश संसद में प्रतिनिधित्व की माँग कर रहे हैं जिससे कि आप भारतीय जनता की राय वहाँ पर अभिव्यक्त कर सकें। इस पंडाल में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए चीख-चिल्ला रहे हैं, तब आप अपने परिवारों में वैसी ही स्वतंत्रता महिलाओं को क्यों नहीं देते? आप किसी महिला को उसके विधवा होते ही कुरूप और दूसरों पर निर्भर होने के लिए क्यों विवश करते हैं? क्या कोई विधुर भी वैसा करता है? उसे अपनी इच्छा के अनुसार जीने की स्वतंत्रता है। तब स्त्रियों को वैसी स्वतंत्रता क्यों नहीं मिलती?"

निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि पंडिता रमाबाई ने भारत में नारी-मुक्ति आंदोलन की नींव डाली।

वे बचपन से ही अन्याय सहन नहीं कर पाती थीं। एक दिन उन्होंने नौ वर्ष की एक छोटी-सी लड़की को उसके पति के शव के साथ भस्म किए जाने से बचाने की चेष्टा की। "यदि स्त्री के लिए भस्म होकर सती बनना अनिवार्य है तो क्या पुरुष भी पत्नी की मृत्यु के बाद सता होते हैं?" रौबपूर्वक पूछे गए इस प्रश्न का उस लड़की की माँ के पास कोई उत्तर न था। उसने केवल इतना कहा कि "यह पुरुषों की दुनिया है। कानून वे ही बनाते हैं, स्त्रियों को तो उनका पालन भर करना होता है।" रमाबाई ने पलटकर पूछा, "स्त्रियाँ ऐसे कानूनों को सहन क्यों करती हैं? मैं जब बड़ी हो जाऊँगी तो ऐसे कानूनों के विरुद्ध संघर्ष करूँगी।" सचमुच उन्होंने पुरुषों द्वारा महिलाओं के प्रत्येक प्रकार के शोषण के विरुद्ध संघर्ष किया।